मिसाल

हरियाली का अग्रदूत

आशुतोष उपाध्याय

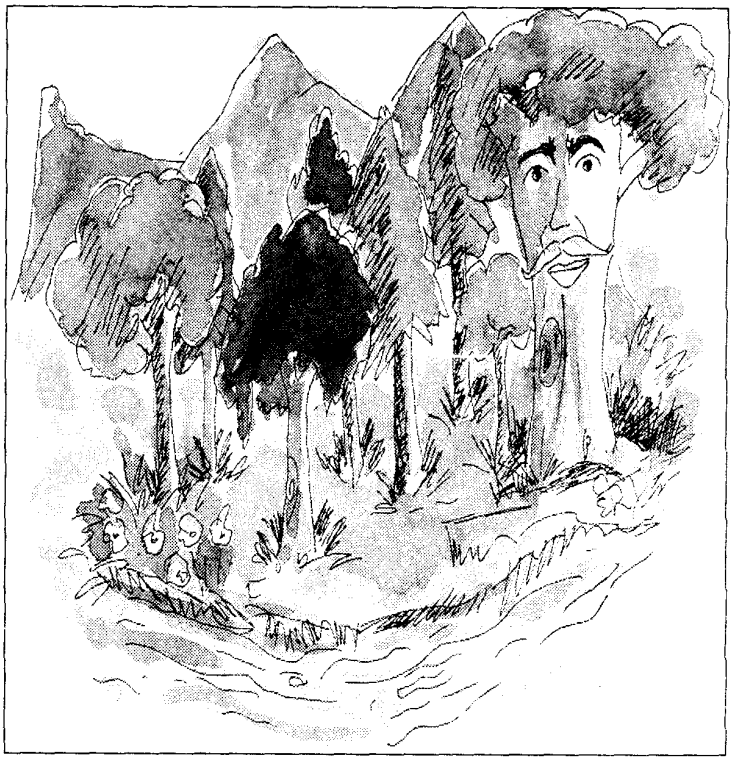

तमाम विपरीत परिस्थितियों, परिजनों व ग्रामवासियों के उलाहनों और सरकारी विभागों के अड़ंगों के बाद भी अगर कोई अपने अभियान पर टिका रहे तो उसे धुनी ही कहा जाएगा। दामोदर सिंह राठौर ऐसे ही धुनी हैं। हजारों कर्मचारियों की फौज के बावजूद वन विभाग या एनजीओ जो काम नहीं कर पाए वह उन्होंने कर दिखाया। पिथौरागढ़ जिले में डीडीहाट तहसील मुख्यालय से १० किलोमीटर दूर भनड़ा गांव के ६७ वर्षीय दामोदर सिंह राठौर 'वनवासी' ने आज से लगभग २४ वर्ष पूर्व सरकारी नौकरी को तिलांजलि देकर एक करोड़ वृक्ष लगाने का संकल्प लिया था। इसके लिए उन्होंने अपनी निजी भूमि से शुरुआत की तो लोगों ने उनका मजाक उड़ाया। जब उनका अभियान अपनी जमीन से आगे सरकारी भूमि तक पहुंचा तो वन विभाग उन्हें धमकाने पहुंच गया। सारी मुश्किलों से लोहा लेकर राठौर ने अब तक ९० लाख वृक्ष बांटे और रोपे हैं तथा ३६५ हैक्टेयर क्षेत्र में जैव-विविधता से सम्पन्न अनोखा स्मृति वन खड़ा कर दिखाया है। उनके अभियान के मद्देनजर पर्यावरण व वन मंत्रालय ने उन्हें इंदिरा प्रियदर्शिनी पुरस्कार से सम्मानित किया है।

दामोदर राठौर अपने छात्र-जीवन में केएम मुंशी के संपर्क में आए और उन्हीं से उन्हें अलग कर दिखाने की प्रेरणा मिली। १९७८ में वे सरकारी नौकरी से त्यागपत्र देकर अपने गांव आ गए और वहां की वन-विहीनता ने उन्हें हरियाली का अग्रदूत बनने की चुनौती दी। परिवार के अन्य सदस्यों ने उन्हें हतोत्साहित किया तो वे गांव से तीन किलोमीटर दूर कुंवर स्टेट में आकर रहने लगे। अपने सपने को आकार देने की शुरुआत की। उन्होंने बांज, बुरांश, क्वेराल, काफल, अयार, उतीस, कैल, पदम, मेहल, भमौर, पांगर, आंवला, सिलिंग, अंगू, खिर्सू, रामबांस और रिंगाल जैसी हिमालयी पारिस्थितिकी के अनुकूल वृक्ष प्रजातियों की नर्सरी बनानी प्रारंभ की। उन्होंने इस बात का खास खयाल रखा कि विलुप्त होती वानस्पतिक प्रजातियों का संरक्षण हो। पर्वतीय ग्रामीण जीवन में वनों का बड़ा महत्त्व है और पशुओं के चारे तथा अन्य कृषि जरूरतों के लिए वे हिमालयवासी वनों पर निर्भर रहते हैं। राठौर ने इस बात का ध्यान रखा कि ऐसी जरूरतों से जुड़े परंपरागत वन वृक्षों की बहुलता बनी रहे। साथ ही उन्होंने औषधीय वृक्षों व पौधों को भी पुनर्जीवन दिया।

हिमालयी क्षेत्र में वनों, वृक्षों की प्रजातियों और पहाड़ी ढलानों से उपजने वाले जलस्रोतों से उत्पादकता का घनिष्ठ रिश्ता है। बांज, बुरांश, उतीस जैसे वृक्षों से ढंके जंगलों में नमी की मात्रा और प्राकृतिक जलस्रोतों की संख्या अन्य वनों की तुलना में कई गुना अधिक होती है। विगत कुछ दशकों में ऐसे जंगलों के उजड़ जाने **और चीड़ वनों के विस्तार के परिणामस्वरूप पुराने जलस्रोत बड़ी संख्या में समाप्त हुए हैं। जल संकटग्रस्त क्षेत्रों का विस्तार हुआ है। पर्वतीय लोक-ज्ञान में पानी उपजाने वाले वृक्षों के संरक्षण पर जोर दिया जाता है। राठौर ने परंपरा से मिली इस समझ का बखूबी उपयोग किया और आज दो दशकों के बाद उनके उगाए जंगल ने न सिर्फ अनेक जलस्रोतों को पुनर्जीवन दिया** है, बल्कि आसपास के खेतों में नमी की मात्रा में भी उल्लेखनीय वृद्धि की है। दरअसल उनकी गतिविधियों का मानक ही 'पानी पैदा करना' था। राठौर के जंगल के एक पुराने सूखे जलस्रोत की बदली हुई तस्वीर आज देखने लायक है, जो एक सदाबाहर चश्मे का आकार ग्रहण कर चुका है। इस स्रोत के पानी से अब नजदीक के ग्रामीण धान की रोपाई करने लगे हैं। अपने उपजाए पानी में वे मछलियां भी पालते हैं और फलों और सब्जियों की तो जैसे बाढ़ आ गई है। इस वन में उन्होंने जीवन में उपयोगी लगभग हर वनस्पति को स्थान देकर ग्रामीण आत्मनिर्भरता का एक नायाब उदाहरण प्रस्तुत किया है।

राठौर का वन जैव-विविधता का भी बेहतरीन नमूना है। यह ऊंचाई के सैकड़ों वन्य पशु-पक्षिओं, सरीसृपों व कीड़े-मकोड़ों की शरणस्थली बन चुका है, जिसके कारण इनके गांवों की ओर रुख कर आक्रमण करने की घटनाओं में भी कमी आई है। उनके अभियान में समाज विरोधी तत्त्वों ने समय-समय पर अनेक बाधाएं पैदा कीं तो उन्होंने भी जंगल को **बचाने के लिए कई तिकड़में भिड़ाईं। कई बार नए पौधों को रौंदे जाने से बचाने के लिए वे मृत जानवरों की हड्डियों के बने आदमियों के पुतलों में लाल रंग डाल कर जंगल में छोड़ देते थे और अफवाह फैला देते थे कि जंगल में कोई आदमी मरा पड़ा है। इससे डर कर लोग कुछ दिनों तक उस ओर रुख नहीं करते थे और इस बीच पौधे जड़ पकड़ लेते थे।**

दामोदर राठौर के काम की सबसे बड़ी खूबी यह है कि उन्होंने अपने अभियान को 'एकला चलो रे' नहीं बनने दिया। पहले वन विभाग को, फिर विद्यालयों और अन्य संस्थाओं को उन्होंने लाखों पौधे बांटे हैं। उन्होंने 'हिमालयन ग्रीन कोर' का स्थापना की है, जिसके फिलहाल २२ नौजवान सदस्य हैं। इनका काम बंजर पड़ी जमीन में पौधे लगाना और उनकी देखभाल करना है। पुरस्कार में मिली धनराशि को भी वे कोर पर खर्च करते हैं। उनकी एक-चौथाई सदी की तपस्या से न सिर्फ एक चमत्कार पैदा हुआ है बल्कि उनके काम को भी मान्यता मिली है। उनके आस-पड़ोस के लोग जो उन्हें एक सनकी बूढ़ा समझते थे, आज उनकी उपलब्धियों से आश्चर्यचकित हैं। ऐसा नहीं कि दामोदर राठौर ने बिल्कुल नई शुरुआत की है, उन्होंने तो बस इतना किया कि हिमालयवासियों की परंपराओं में मौजूद भूली-बिसरी समझ को धैर्य से धरती पर उतारा है। राठौर का काम हमें याद दिलाता है कि पर्यावरण संरक्षण के लिए हमारे देश में संसाधनों की नहीं बल्कि कर गुजरने की नीयत व ईमानदारी का अकाल है। वरना जो काम उत्तरांचल का भारी-भरकम वन विभाग और हजारों की तादाद में डटे स्वयंसेवी संगठन अरबों रुपए पी जाने के बाद भी नहीं कर पाए, उसे राठौर ने बिना किसी की मदद के सिर्फ अपनी इच्छाशक्ति के बूते कर दिखाया। क्या इस नवोदित राज्य की सरकार भी ऐसी इच्छाशक्ति का परिचय देगी? ❑